International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 04, No. 04(I), October - December, 2022, pp. 193-198

वैदिक साहित्य में पर्यावरण सरंक्षण हेतु वनस्पति–जन्तु सरंक्षण की अवधारणा

डॉ. राजेन्द्र कुमार पुरोहित*

प्रस्तावना

वनस्पति शब्द अतिप्राचीन है, इसका प्रचलन वैदिक काल से है। इसका सामान्य अर्थ वन का पति होता है। श्रीमद्भागवत् पुराण में वर्णित है कि 6 प्रकार के प्राकृत सृष्टियों के बाद 7वीं प्रधान वैकृत सृष्टि 6 प्रकार के स्थावर वृक्षों की होती हैं – वनस्पति, औषधि, लता, त्वकसार, वीरूध और द्रुम। मनु स्मृति में उल्लेख है कि पुर्व जन्म के कारण पेड़ पौधे अत्यधिक तमों गुण से युक्त और भीतर से चेतना युक्त होने पर भी बाहर किसी से भी सुख दुख प्रकट करने में असमर्थ होते हैं। भारत में वृक्षों की महत्ता सभी कालों मे पाई गई हैं। तैत्तिरिय संहिता में वर्णित है कि वृक्ष अपने हरित पत्रांकों में शीतल एवं ऊष्ण नींद देते हैं।

वेद ग्रंथों में वर्णित है कि वृक्ष अपने फूलों से देवताओं का, फलों से पितरों का और छाया से अतिथियों का पूजन करते है। वृक्षों की महत्ता को ध्यान में रखते हुए ही मनु स्मृति में कहा गया है कि वृक्ष, लता आदि सभी पौधों का फल–फूल, पत्ता और लकड़ी आदि के द्वारा जैसा–जैसा उपभोग होता है, उनकों नष्ट करने वाले अपराधी को वैसा–वैसा ही दण्ड देना शास्त्रयुक्त माना गया है। शतपथ ब्राह्मण में वर्णित है कि भारतीयों का वनस्पति जगत से घनिष्ठ प्रेम एवं सम्पर्क था। गांव तथा अरण्य के भेद कों पौधों के माध्यम से स्पष्ट किया गया है।

प्राचीनकाल में वृक्षों के संवर्द्धन और उनके संरक्षण के विषय में अनेक वर्णन मिलते है। वृहत्संहिता के वृक्षायुर्वेद नाम अध्याय में वृक्षों के रोपण के नियम वृक्ष लगाने की विधि आदि का विवेचन मिलता है, बगीचे या घर के समीप शुभ करने वाले नीम, अशोक, पुन्नाग, शिरीप और प्रियंगु जैसे वृक्ष लगाने के लिए कहा गया है। वृहत्संहिता में ही वृक्षों की चिकित्सा और वृक्षारोपण के उत्तम नक्षत्रों का विवेचन मिलता है। एक वृक्ष से दूसरा वृक्ष 20 हाथ पर लगाना उत्तम माना गया है। इसके अलावा इसी ग्रंथ में रोगी वृक्षों की चिकित्सा का भी उल्लेख मिलता है, रोगी वृक्ष का अंग काट देवे और फिर वायविडंग, घृत आदि को मिलाकर वृक्ष में लेप कर देवे और दूध मिश्रित जल सिंचे। ऋषि मुनियों ने वृक्ष वनस्पति संरक्षण की धारणा बनाये रखने के लिए उनके लगाने से गुण और पुण्य की प्राप्ति तथा वृक्ष काटने पर दण्ड और प्रायश्चित का प्रावधान किया है। धर्म सूत्रों में यज्ञ में काम आने वाले वृक्षों तथा खेती के भूमि वाले वृक्षों के अलावा अन्य फूल–फल देने वाले वृक्षों को काटने से मना किया है और राजा द्वारा दण्डित किये जाने की व्यवस्था की है। धर्म शास्त्रों में हेमाद्रि वृक्षारोपण, वाटिका संवर्द्धन तथा वृक्ष दान से प्राप्त होने वाले पुण्य के विषय में सविस्तार वर्णन किया गया है।

याज्ञवल्क्य–स्मृति में वृक्षों को बिना उद्देश्य काटने पर दण्ड का प्रावधान किया है, कोपलों से युक्त डालों वाले वृक्षों की शाखा और तना या सम्पूर्ण वृक्ष काटने पर गायत्री ऋचा का 100 बार जप करने का विधान बताया है। मनुस्मृति में जानकारी मिलती है कि यदि वृक्ष मनुष्य के जीवन निर्वाह का साधन हो तो बीस, चालीस और अस्सी पण दण्ड लगता है, इसके अतिरिक्त धार्मिक स्थान श्मशान, सीमा, पवित्र स्थान और देव मन्दिर में उत्पन्न हुए पीपल पलाश आदि के वृक्ष की कोई शाखा काटता है तो उसे पहले से दुगना दण्ड लगेगा।

वैदिक साहित्य में वृक्ष–वनस्पति सरंक्षण हेतु पाप पुण्य और स्वर्ग नरक की अवधारणा से जोड़कर तत्कालीन जन मानस को महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय घटक पेड़ पौधों की रक्षा के लिये प्रेरित किया है। तत्कालीन ऋषि मुनि इस बात को जानते थे कि यदि वृक्ष वनस्पति सरंक्षण की अवधारणा को मानव के इस लोक और

* सह आचार्य, इतिहास, राजकीय बागड़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पाली, राजस्थान।

परलोक को सुधारने की धारणा से जोड़ दिया जाये तो व्यक्ति आसानी से वृक्ष वनस्पति के सरंक्षण हेतु जागृत होगा। इसीलिए अग्निपुराण में कहा गया है कि जो आराम (बगीचा) बनवाता है वह मनुष्य बहुत अधिक समय तक इन्द्र के नन्दन वन में निवास करने का अधिकारी होता है।

वृक्षों की मानव समाज को बहुत बड़ी देन है वृक्ष जीवन के लिये वर्षा को आमंत्रित करते है। वे कार्बनड़ाईआक्साईड लेते और आक्सीजन छोड़ते है। नगरों के मध्य पेड़–पौधों को नगरों के फेफड़े कहा जाता है। लिपि बद्ध करने हेतु भोज पत्र व कागज के लिये लकड़ी भी वृक्षों से ही मिलती है। अपने गुणों के कारण हमारे देश में वृक्षों की पूजा की जाती रही है। मानव और पर्यावरण ग्रंथ में वनस्पति के विकास क्रम और उसकी कम होती हुई संख्या पर चिन्ता प्रकट की गई है। इसी ग्रंथ में कहा गया है कि प्रकृति ने सबसे अधिक वनस्पति को उत्पन्न किया, दूसरे क्रम में मासांहारी तथा तीसरे क्रम में मनुष्य को लेकिन वर्तमान में मनुष्य सबसे अधिक और वनस्पति सबसे कम रह गई है, जो जनसंख्या बढ़ने का परिणाम है। वैदिक ग्रंथों में वर्णित वृक्ष वनस्पति सरंक्षण के प्रति वर्तमान दौर में लगाव की अभिवृति विकसित करने की जरूरत है।

पर्यावरण वैज्ञानिकों के अनुसार वृक्ष एवं वनस्पतियां पर्यावरण की सुरक्षा के लिये सर्वाधिक उपयोगी है जो कि जीवनदायक एवं स्वास्थ्यप्रद वायु ऑक्सीजन छोड़ते है तथा जीवन के लिये हानिकारक वायु को अपने में ग्रहण कर लेते है। वृक्षों के इस महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुए ही वेदमन्त्रों में वृक्षों, वनस्पतियों,औषधियों एवं वनों तथा वनों के रक्षकों तक को नमस्कार किया गया है और इनके मधुमय हितकारी एवं शान्तिदायक होने की कामनाएं की गयी है। यजुर्वेद और ऋग्वेद में औषधी और वृक्ष–वनस्पति विषयक विवरण मिलते हैं। जिनमें – 'नमो वृक्षेभ्यः', 'नमो वन्याय च', 'वनानां पतये नमः', 'औषधीनाम् पतये नमः', 'मधुमान्नो वनस्पतिः', 'औषधयः शान्ति वनस्पतयः शान्ति'।

यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में वृक्ष, वनस्पति, वीरूध एवं औषधि प्रायः एक ही अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। मन्त्रद्रष्टा ऋषि इस तथ्य को भली–भांति जानते थे कि वृक्ष एवं लताएं जहां अपने फल फूल एवं काष्ठ आदि द्वारा समृद्धि प्रदान करते हैं, वहां वे शुद्ध वायु द्वारा पर्यावरण को माधुर्यमय तथा प्राणवान् भी बनाते हैं। ऋग्वेद का अरण्यानी सूक्त पर्यावरण के महत्त्व की दृष्टि से वैदिक काल का राष्ट्रीय काव्य कहलाने का अधिकारी है। ऋग्वेद में अरण्यानीको देवता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यर्जुवेद में वनानां पतये नमः कहा गया है, इसी प्रकार ''**या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा** '' कहकर ऋषियों ने वनों और औषधियों को मानव कल्याण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया है और उसे देवताओं से प्राचीन प्रतिष्ठित किया है।

ऋग्वेद में कहा गया है कि औषधि का आवहान करने वाला व्यक्ति अथवा मुनि या रोगी, औषधि से रोग दूर करने के लिए और पति स्वरूप सुख को प्राप्त करने के लिए आवाहन करता है, यह ऊपर की ओर फैलने वाली गुणकारक तथा रोग नाशक औषधि है।

अथर्ववेद में कहा गया है कि दिव्य गुण वाली, शक्तिवर्द्धक और मानव को जीवन देने वाली बेल–बूटियों को देवता की भांति आदर देते हुए आह्वान किया जाता है, इसलिए इन जड़ी–बूटियों की रक्षा की जानी चाहिए, उखाड़ कर खरपतवार की तरह व्यर्थ नहीं फेकना चाहिए। अथर्ववेद के एक मन्त्र में अश्वत्थ (पीपल) कुश, कांस (दर्भ), सोमलता, चावल और जौ के गुणों को जानने की प्रेरणा दी गई है।

अथर्ववेद में ही कहा गया है कि जिस प्रकार माता बालक को दूध पिलाकर बड़ा करती है वैसे ही ये वनस्पतियां भी मानव कल्याण के लिए दूध देती है। अर्थात रस प्रदान करके रोगों का निदान करती है। अथर्ववेद में वानस्पतिक औषधियों को वायु के प्रचण्ड तूफान की तरह माना गया है जो रोग को वृक्ष की तरह उखाड़ कर फेंक देती है। वैदिक साहित्य में पीपल, तुलसी और अशोक वृक्ष के महत्त्व पर काफी बल दिया गया है। वैदिक वाड्.मय में ब्राह्मण वर्ग को ही पीपल की समिधा से हवन करने का अधिकार प्राप्त था, अन्य किसी को नहीं, इस धार्मिक दृष्टिकोण के कारण पीपल वृक्ष की रक्षा होती है। संस्कृत वाड्.मय में कहा गया है कि पीपल गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ और आक की समिधाओं से हवन करने पर विजय प्राप्त होती है।

तुलसी पादप को विष्णु प्रिय माना गया है और इसीलिए तुलसी की पूजा और विवाह करवाया जाता है इस दृष्टि से तुलसी पादप का रोपण और संरक्षण हो पाता है और इससे पर्यावरण संरक्षण में मदद मिलती है। तुलसी के रोपण से वायु प्रदूषण रुकता है। अशोक वृक्ष को बुद्ध चरितम् में मानसिक पर्यावरण के सरंक्षण में सहायक बताया गया है, कामी व्यक्ति के शोक वर्द्धन से मानसिक पर्यावरण की उत्पति दिखाई गई है।

वृक्ष पादप लता आदि वनस्पतियाँ प्राणियों के लिए सर्वथा जीवनदायी शक्तियां हैं। वृक्ष प्राणियों के आश्रय स्थल हैं। प्राकृतिक पर्यावरण में वनस्पतियों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। स्वस्थ पर्यावरण की रक्षा हेतु पक्षी, पेड़–पौधे, वन, झरने, नदी, जल स्त्रोत, भूमि, वायु, खनिज वस्तुऐं, पशु आदि का सदुपयोग करना चाहिए, न कि मित्र पशु पक्षियों का वध करके, धन के लिए वनों को काटकर अपनी सुख सुविधा के लिए जल प्रदूषण करके, खनिज पदार्थों का सर्वाधिक खनन करके यन्त्रागार और औद्यौगिक क्षेत्र स्थापित करके तथा इनसे उत्पन्न धुंआ धूलिकण लोहा का चूरा से वायु प्रदूषण बढ़ाकर, उपजाउ भूमि का क्षरण न रोक कर प्रदूषण नहीं बढाना चाहिए। प्राकृतिक पर्यावरण से अन्य तीन शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक पर्यावरण किसी न किसी रूप में संबंध हो जाते हैं। कवीन्द्र रविन्द्र के शब्दों में सभ्यता का मूल स्रोत नगर में नहीं अपितु वन में है। वृक्षों का मानव–जीवन के साथ अभिन्न संबंध है और वृक्षों का अंत मानव जीवन का अंत होगा। इसीलिए पौराणिक ग्रंथों में भिन्न–भिन्न प्रकार से इनकी रक्षा के उपायो पर बल दिया गया है जैसे– वृक्षों में देवताओं का निवास होता है, आदि। वास्तव में वृक्षों के साथ धर्म को जोड़ना इसलिए आवश्यक हो गया क्योंकि 'वृक्षों को मत काटो ' इस बात को धर्म से जोड़ने से कि उसमें देवता का निवास होता है इससे स्थायित्व आ जाता है। वृक्ष रात्रि में कार्बनडाईआक्साईड छोड़ते हैं अतः रात्रि में उनके पास मत जाओ' इस वैज्ञानिक तथ्य को 'रात्रि में सोते वृक्षों को मत जगाओ'इस रूप में उपदेशित करना, श्रेयस्कर है।

वेदों में पशु हिंसा का केवल निषेध ही नहीं किया गया बल्कि मनुष्यों को पशु एवं उनके जीवन की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहने का सकारात्मक निर्देश भी दिया गया है। अथर्ववेद में कहा गया है कि – ''द्विपाद'' (दो पैर वाले) और ''चतुष्पाद'' (चार पैर वाले) जीवों की हत्या न करों। इसी वेद में कहा गया है कि गाय, घोडे और मनुष्य की हत्या न करों। यजुर्वेद में पशुओं का नाम लेते हुए कहा गया है कि– गाय, गवय (नील गाय), द्विपाद पशु, एक शफ वाले पशु, चतुष्पाद पशु, ऊँट और भेड़ आदि को न मारों।

यजुर्वेद में घोड़े की हत्या को दण्डनीय अपराध बताया गया है। वेदों में गाय का बहुत महत्त्व बताया गया है, और उसमें सभी देवों का निवास बताया गया है। ऋग्वेद में गाय को इन्द्र की प्रतिनिधि बतातें हुए उसे सोम का पहला घूंट कहा गया है। ऋग्वेद के एक अन्य मंत्र में गायों से कल्याण की बात कहीं गई है। ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने 28वें सुक्त में गौ की स्तुति की है। इसी तरह दसवें मण्डल के 19वें सुक्त का देवता गौ है। पवित्रता और लगाव की दृष्टि से ऋग्वैदिक ऋषियों के मन में जो स्थान गाय को प्राप्त था वो अन्य किसी पशु को प्राप्त नहीं था ऋग्वेद के छठे मण्डल में भारद्वाज ऋषि ने गाय की महत्ता और पवित्रता पर जानकारी दी है

वैदिक व्यवस्थाकार पशु पक्षी और वन्य प्राणियों के संरक्षण की बात पर्यावरण संवर्धन की जागरूकता पैदा करने के लिए करता है, साथ–साथ इनकी मानव जीवन के लिए उपयोगिता के परिप्रेक्ष्य में उल्लेख करता है। वृक्ष–वनस्पति, गाय के दूध, औषधि आदि की प्रशंसा करने वाले सैकड़ो सूक्त वेदों में मिलते हैं।

ऋग्वेद के प्रणेता ऋषि मानव और मानवेत्तर जीव जन्तुओं के साथ ही वनस्पति, पेड़–पौधों में भी उसी एक सत्ता के विविध रूपों को देखते हैं। विश्वामित्र ने ऋग्वेद के सप्तम मंडल में देवताओं के साथ औषधियों और वृक्षों के लिए भी स्तोत्र कहे हैं कि – ''इन्द्र, वरूण, मित्र, अग्नि, जल औषधियां और वृक्ष हमारे इस स्तोत्र को सुने, मरूतों के पास रहकर हम सुख से रहेगे, तुम सदा हमारी रक्षा करों।

शरीर को स्वस्थ रखने वाली औषधियों को ऋग्वेदिक ऋषियों ने माता के समान हितकारिणी बताया है। ऋषि अथर्वा के पुत्र भीषक् कहते हैं कि ''हे माता तुल्य हितकारिणी औषधियों, तुम्हे पाने के लिए मैं अश्व, गौ, भूमि, वस्त्र तथा अपने आप को भी तुम्हारे लिए देता हूँ।

ऋग्वेद के दशम मण्डल में वृक्ष शिरोमणी वृक्षराज अश्वत्थ वृक्ष (पीपल) का उल्लेख हुआ है। अश्वत्थ को पवित्र वृक्षों में माना गया है, ऋग्वैदिक सभ्यता की तरह हड़प्पा सभ्यता के आरम्भिक काल (3000 ई.पू.) के हरियाणा के हिसार जिले के कुणाल के अवशेषों में प्राप्त मृद्भांड के टुकडे पर अश्वत्थ के पते का चित्र मिला है। ऋग्वेद के दशम मण्डल में अश्वत्थ का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि–हे औषधियो! तुम अश्वत्थ वृक्ष और पलाश वृक्ष पर निवास करती हो, तुम रोगी के ऊपर कृपा करती हो, उसे बल प्रदान करती हो।

इतिहास भूगोल के साथ अनादि कार्यों की पूर्ति के लिए प्रकृति ने मनुष्य को बनाया है। यह मूलभूत भरोसा, श्रद्धा आजकल आवश्यकता है। पर्यावरण के सन्तुलन के लिए निःसर्ग से ईमानदारी की बहुत आवश्यकता है। व्यर्थ ही पृथ्वी को खोदना, पानी को बिखेरना, अग्नि को जलाना, वायु को रोकना, फल–फूल पत्ती आदि को तोड़ना, स्वयं निष्प्रयोजन न घूमना एवं दूसरों को घुमाना यह सब प्रमादचर्या है जो नहीं करनी चाहिए। प्रमादचर्या व्रत के पालन से वनों की अन्धाधुन्ध कटाई रूकेगी।

वास्तव में प्राचीन भारतीय साहित्य में पर्यावरण दर्शन समाया हुआ है जो हमें जीवन की उस खुशहाली की ओर ले जाता है तथा **"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः"** की भावना को उद्बोधित करता है। अतः आज की आवश्यकता भारतीय वैदिक मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करने की है, ताकि सामाजिक समरसता बनी रहे। पृथ्वी पर जीवन बनाये रखने हेतु हमें अपने भारतीय चिन्तन के चिरपरिचित प्रकृति से भावनात्मक, एकात्मक स्थापित करने वाले परम्परागत श्रद्धामय संस्कार व्यवहार में लाने होंगे। ऋग्वेद में नदीं, पर्वत, वनस्पतियां, जीव–जन्तु, उनकी संस्कृति तथा अतीत के प्रति उसका सम्मोहन जाने अनजाने प्रविष्ट हो जाते है।

आज आन्तरिक सजावट, फर्नीचर ईंधन खिलौने आदि के लिए जंगल से पेड काटे जाते है, पहाड़ ध्वस्त किये जा रहे है, इससे वायु प्रदूषण ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण आदि समस्याएं उत्पन्न हो गयी है। वृक्षादि के आधिक्य से यह समस्या समाप्त हो सकती है। वृक्षादि के कटने से वृष्टि कम होते होते भूगर्भ जल की ऊंचाई दिनोंदिन कम हो रही है। वायुमण्डल की कार्बन का शोषण करने वाली नैसर्गिक यन्त्रणा का क्षय हो रहा है। आज हम सब उसके दुष्परिणाम भुगत रहे है। यहां तक कि हमारे धर्म ग्रन्थों में पीपल वृक्ष को देवतुल्य माना है जो वृक्ष पर्यावरण की दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण है। यह प्रतिक्षण प्राणवायु हमें प्रदान करता है जबकि अन्य वृक्ष सूर्य के प्रकाश के आधार पर यह क्रिया करते हैं, ऐसे वृक्षों को भी आज नष्ट किया जा रहा हैं। जो धर्म विरुद्ध एवं पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक है तुलसी के पौधे के गन्ध से विषाणु सूक्ष्म–रोग कीटाणु नष्ट होते है। इस पौधे से पर्यावरण पर्याप्त मात्रा में शुद्ध होता है तथा इसके पत्तों में स्वर्ण व मंजरी में हीरे के तत्त्व को प्राप्त कराने वाले गुण विद्यमान हैं तथा इसके पत्तों में पाये जाने वाले तत्त्व रोग निरोधक क्षमता वाले हैं, फिर भी मनुष्य अपने आंगन में तुलसी का पौधा नहीं लगा पाता।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सप्तमो मुख्यसर्गस्तु षड्विधस्तरस्थुषां च यः।। – श्रीमद् भाग. पु. – 1, 10, 18
2. तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना। अन्तः संज्ञा भवन्येते सुखदुःखसमन्विता।। मनु.स्मृ. 1, 49
3. काणे, डॉ. पाण्डुरंग वामन : धर्मशास्त्र का इतिहास, 1, 473
4. तैत्तिरिय संहिता – 3.4.8.4
5. वनस्पतीनां सर्वेषामुपभोग यथा यथा। तथा तथा दमः कार्यो हिंसायभिति धारणा। मनु. स्मृ. (8, 285)
6. शत. ब्रा. एक अध्य. पृ. 235।
7. वृहत्संहिता अध्याय वृक्षायुर्वेद, श्लोक 2
8. चिकित्सितमथैतेषां शस्त्रेणादौ विशेधनम्।
9. विडङ्गधृत पड्काक्तान सेचयेत् क्षीरवारिणा।। वृहत्सं.अ.वृक्षायु श. 15

(क) विसि. धर्म सूत्र (19, 11–12)

(ख) वि.धर्म सूत्र (5,55,59)

10. धर्म शास्त्र का इतिहास (भाग चार)
(क) फलदानां तु वृक्षाणां छेदने जम्यमृक्शतम्।–मनु.स्मृति (11,142)
(ख) याज्ञ.स्मृ.प्रक.दण्ड पा.श. 276
11. चैत्यश्मशानसीमास पुण्यस्थाने सुरालये।
12. जाद्रुभाणां च द्विगुणों दमो वृक्षे च विश्रुते।। – मनुस्मृति श्लोक 227
13. आरामं कारयेद्यस्तु नन्दने सुचिरं वसेत्।–अग्नि पुराण (1,19)
(क) जन.वि.और पर्या. पृ. 50
(ख) मान. और पर्या.38
(ग) पर्या. और जी. पृ. 27
14. मानव और पर्यावरण, पृ. 39
15. राठोर, नंजला : पुराण साहित्य में पर्यावरण संरक्षण डिसेन्ट बुक्स पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 146
16. शर्मा, डॉ. गणेश दत्त : ''वेद में पर्यावरण की रक्षा के उपायों का उल्लेख'' (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 19
17. यजु 16–17
18. यजु 16–17
19. यजु 16–18
20. यजु. 16–19
21. ऋग्वेद– 90–8
22. यजु 36–17
23. शर्मा, डॉ गणेश दत्त : ''वेद में पर्यावरण की रक्षा के उपायों का उल्लेख'' (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 19–20
24. दाधीच, डॉ. रामकुमार : ''वैदिक पर्यावरण चेतना : आधुनिक संदर्भ में (संस्कृत वांडग्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 30
25. उत्त गाव इवादन्त्यूत वेश्मेव दृश्यते।
26. उतौ अरण्यानिः सायं शकटीरिव सर्जति।। – ऋग्वेद दशम मण्डल, सूक्त 146
27. पुरोहित, प्रो. आनन्द : ''वैदिक साहित्य में प्रकृति एवं पर्यावरण'' (संस्कृत वांडग्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 51
28. उत्तानपर्णे सुभगे देव जुते सहसवति।
29. सपत्नी मे परा धम पतिं में केवलं कुररू (ऋग्वेद 10.145.2)
30. डॉ. क्षेमचन्द : वैदिक और लौकिक संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ.64
31. अश्वत्थो दर्भो वीरुधां सोमो राजामृतं हविः।
32. ब्रीहिर्यवश्च भेषजौ दिवस्पुत्रावमर्त्यौ। – (अथर्ववेद 8.7.20)
33. ''पुष्पवतीः प्रसूमतीःफलिनीरफला उत।
34. सं मातर इव दुह्ममस्मा अरिष्ट तात ये।। (अथर्ववेद 8.7.27)
35. यथा वातो वनस्पतीन् वृक्षान् भन्क्त्योजसा।
36. एवा समत्नान् में भङ्ग्धि पूर्वानजाता उतापरान् वरणस्त्वभि रक्षतु। (अथर्ववेद 10.3.13)

37. डॉ. क्षेमचन्द : वैदिक और लौकिक संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी) राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 66
(क) ''अशोको दृश्यतामेष कामिशोकविर्धनः।
38. रूदन्ति भ्रमरा यत्र दह्यमाना इवाग्निना।। (बुद्ध चरितम)
(ख) डॉ. क्षेमचन्द : वैदिक और लौकिक संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना सम्पादक मोतीलाल जोशी), राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, 2001, पृ. 67
39. राठोर, नंजला : पुराण साहित्य में पर्यावरण संरक्षण डिसेन्ट बुक्स पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 180
40. शर्मा, डॉ. सरोज : ''वैदिक एवं लौकिक संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना'' (संस्कृत वाङ्मय में पर्यावरण चेतना, संपादक मोतीलाल जोशी) राजस्थान प्रकाशन जयपुर, 2001, पृ. 97
41. अथर्ववेद – 11.2.1
42. अनागोहत्या वै भीमा – अथर्ववेद – 10.1.29
43. मा हिंसीर्द्विपादं पशुम् – यजुर्वेद – 13.47 से 50
44. यो अर्वन्तं जिघांसति तमभ्यमीति वरूणः – यजुर्वेद 22.5
45. अथर्ववेद – 9.7.1 से 26। एवद् वै विश्वरूपम् सर्वरूपम् गोरूपम् – अ0 9.7.25
46. गावो भगो गाव इन्द्रो... गावो सोमस्य प्रथमस्य भक्षः – ऋग्वेद 6.28.5
47. आ गावो अग्मन् उत भद्रमक्रन – ऋग्वेद 6.28.1
48. यूयं गावो भेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।
49. भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु।। – ऋग्वेद– (6.28.6)
50. मधुव्वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।।
51. मधुनक्त मुतोषसो मधुमत् पार्थिवजः। मधु द्यौरस्तुनः पिता।।
52. मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमॉ 2 अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः।। –(यजु. 13.27)
53. तन्न इन्द्रो वरूणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त।
54. शर्भन्त्स्याम मरूतामपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।। – ऋग्वेद 7.34.25
(क) ऋग्वेद – 10.97.2
(ख) सिंह, कृपा शंकरः ऋग्वेद हड़प्पा सभ्यता और सांस्कृतिक निरन्तरता, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 113
55. सिंह, डॉ. कृपाशंकरः ''ऋग्वेद हड़प्पा सभ्यता और सांस्कृतिक निरन्तरता, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001, पृ. 113
56. अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता। गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरूषम्। – ऋग्वेद 10.97.5

❖◆❖